अमृतलाल नागर की औपन्यासिक सृष्टि में नारी-विमर्श

- Priyanshi B. Patel
Department of Hindi
Saurashtra University, Rajkot

श्री अमृतलाल नागर एक जागरूक एवं निष्ठावान साहित्यकार हैं, जिन्होंने भारतीयता को अपने तन-मन में रसा-बसा लिया है। प्रेमचन्दोत्तर युग के सशक्त रचनाकार के रूप में उन्हें सुज्ञ पाठक अवश्य याद करते हैं। उनके साहित्य का हिन्दी साहित्य जगत में असाधारण महत्त्व है। प्रेमचन्द के बाद हिन्दी उपन्यास साहित्य में विषय वैविध्य, संख्या, आकार-प्रकार तथा प्रस्तुति आदि सभी दृष्टियों से अपना विशिष्ट स्थान बनाने वाले नागर जी व्यक्ति के रूप में भी सर्वमान्य तथा अगणित पाठकों के प्रिय रहे। अपनी मौलिक विचारधारा और बेबाकी से बात कहने की उनकी विशेषता काबिलेतारीफ है। उन्होंने आधुनिक समय के भारतीय सामाजिक जन-जीवन का बहुमुखी चित्रण किया है। नागर जी का साहित्य परिमाण में प्रचुर तो है ही, साथ ही वैविध्य की दृष्टि से भी सराहनीय है। उनकी साहित्यिक मूल्यों के प्रति अटूट आस्था है; इसका प्रमाण स्वयं उनका साहित्य है। श्री नागर जी ने अनेक विधाओं में साहित्य रचा है, परंतु वे मुख्यतः उपन्यासकार हैं और साथ ही महान गद्य शिल्पी हैं। "अमृतलाल नागर ने कहानियाँ लिखी हैं, उपन्यास लिखे हैं, नाटक लिखे हैं, और बहुत तरह का गद्य लिखा है पर हिन्दी पाठक उन्हें मुख्यतः उपन्यासकार के रूप में जानते हैं और आगे वह इसी रूप में याद किये जायेंगे।"[1] उनके उपन्यासों का कथ्य किसी उपदेश-निदेश के माध्यम से नहीं, अपितु अनुभव और संवेदना के धरातल पर बड़ी मार्मिकता से अभिव्यक्ति पाता है। फल स्वरूप उनके पाठकों का विशाल वर्ग है, देश में और विदेश में भी। डॉ. आनंद नारायण के शब्दों में "... बल्कि यह कहना अनुचित न होगा कि प्रेमचन्द के बाद वे दूसरे बड़े कथाकार थे, जिन्होंने अपना पाठक वर्ग स्वयं तैयार किया था।"[2] अपने गौरवान्वित कथा-साहित्य में इस महान साहित्यकार ने नारी के प्रति अपने दृष्टिकोण का परिचय देते हुए नारियों के प्रति स्वस्थ अभिप्राय दिया है। मैंने यहाँ इस आलेख में उनकी नारी विषयक दृष्टि का परिचयात्मक प्रस्तुतीकरण किया है।

अमृतलाल नागर की नारीवादी स्वस्थ जीवनदृष्टि:

संसार-चक्र पुरुष (Male) और स्त्री (Female) के परस्पर मेल-जोल से ही परिचालित है। दोनों एक दूजे के पूरक हैं। एक कड़वी सच्चाई यह है कि पुरुष-प्रधान समाज ने हमेशा नारी को दूसरा दर्जा ही दिया है। आज चारों ओर 'नारी विमर्श' पर विशद चर्चाएँ हो रही है। नारी के पद, स्वातंत्र्य, आचरण, कर्तव्य पर पुरुष वर्ग कुछ पाबंदियाँ अभी भी बरकरार रखना चाहता है। हाँ, नारी की स्थिति में सुधार अवश्य हुआ है, परन्तु अभी भी यह 'हाथी के दाँत वाली' स्थिति है। पुरुष-पधान समाज कहता कुछ और है करता कुछ और है। खैर, हमें यहाँ यह देखना है कि नागर जी ने अपने उपन्यासों के जरिए नारी समाज का चित्रण कैसे किया है ?

सामाजिक संरचना में परिवार रूपी संस्था का अपना महत्त्व है। यह संस्था पुरुष-नारी के सहयोग से चलती है। संसार में नारी के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। किसी भी समाज की श्रेष्ठता-उन्नति तथा अश्रेष्ठता-अवनति उस समाज में नारी की स्थिति पर निर्भर करती है। नागर जी ने प्रागैतिहासिक काल से लेकर आधुनिक काल तक की नारी का चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। उन्होंने नारी का सकारात्मक (Positive) व नकारात्मक (Nagative) दोनों प्रकार का रूपांकन किया है। बाकी निर्णय पाठकों पर छोड़ा है कि इन दोनों में से कौन-सी नारी का रूप इस समाज के लिए वांछनीय-अवांछनीय है। नागर जी की उपन्यास-सृष्टि एक लंबी कालावधि को अंकित करती है। नारी पुरुष की तरह ही समाज की एक इकाई है। उसका योगदान व मूल्य स्वयं स्पष्ट है।

अर्द्धांगिनी प्रतिभा के प्रति नागर जी की नारीवादी जीवनदृष्टि :

अमृतलाल नागर जी के जीवन में उनकी पत्नी प्रतिभा जी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। "अगर बा की जगह हमारी माँ कोई सामान्य प्रकार की मध्यमवर्गीय स्त्री होतीं तो बाबूजी या तो वह ऊँचाई न पाते जो उन्हें मिली या वह घर छोड़कर भाग लेते। बा ने उन्हें नोन-तेल लकड़ी की चिन्ता में कभी पड़ने नहीं दिया। घर खर्च कैसा चल रहा है, खर्च कितना हो रहा है, इससे बाबूजी बेखबर रहते थे।"[3] नागर जी अपनी रचना 'टुकड़े टुकड़े दास्तान' प्रतिभा को समर्पित करते हैं, जिसमें उनका पत्नी-प्रेम झलकता है- "जिसने हर निराशा से बचाये रखकर मुझे लेखक बनाये रखा, जो बहुत दूर होकर भी मेरे बहुत पास है।"[4] परिवार में प्रेमभावना सुखी दाम्पत्य की निशानी है। मधुरेश नागर दंपति को इस रूप में देखते हैं-"नागर जी गहरे परिवार-भाव वाले लेखक थे। उनकी यही पारिवारिकता उन्हें अड्डेबाजी से लेकर निन्दा रस से बचाती थी। घर और बाहर वे परिवार की मर्यादा में बँधे व्यक्ति थे। घर से शुरू करके समूचे हिन्दी क्षेत्र और उसके बाहर भी, नागर जी इसी परिवार-भाव से जुड़े लेखक का उदाहरण थे। परिवार की धरती में धँसी गहरी जड़ों के कारण ही वे दाम्पत्य सम्बन्धों और मुहल्लेदारी की नैतिकता से बँधे थे।"[5] पत्नी के त्याग ने ही वस्तुतः उन्हें लेखक बनाकर सामाजिक सुरक्षा और हैसियत दी।

कुमुद नागर लिखते हैं- "जब बाबूजी ने सार्वजनिक तौर पर कहना शुरू किया कि 75 प्रतिशत अमृतलाल नागर तो प्रतिभा नागर ही हैं तो उसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं थी, और न पत्नी को इतना महत्त्व देकर वह अपनी इमेज को उठा रहे थे। वह एक बड़ी ही ईमानदार स्वीकारोक्ति थी। बा के बगैर उनका काम ही नहीं चल सकता था।"[6] नागर जी प्रतिभा जी के प्रति पूरी तरह से समर्पित थे। "बस, एक ही जगह हम दोनों की पटरी नहीं बैठती थी। वह मुझ पर शक करती थीं और मैं चिढ़ता था। यह सच है कि मेरे मिजाज में रंगीनी थी, मगर यह भी सच है कि मेरी बेहोशी में वह रंगीनी बिट्टो (प्रतिभा) में से होकर होश के दिन आते-आते तक एक नई शक्ति बन गई थी। मेरे सौभाग्य से सगाई की तरह ही वह शक्ति छापे के अक्षरों से दोस्ती में बदलकर एक नया रूप धारण करने लगी थी।"[7] नागर जी का इतनी सहजता से स्वीकार करना मुझे लगता है, यह उनके मधुर दाम्पत्य जीवन का परिचायक है। प्रतिभा जी की मृत्यु के पश्चात अमृतलाल शून्यमनस्क से हो गये थे। "बा के देहांत के बाद बाबूजी के जीवन में जैसे एक वैकुअम पैदा हो गया था। उस दौरान लगभग एक साल तक तो बाबूजी इतने अंतर्मुखी, इच्छारहित और असंपृक्त हो गये थे कि देख कर भय लगता था।"[8] स्वाभाविक है कि जिस अर्धांगिनी ने उन्हें इतना सब कुछ दिया, उसके चले जाने पर खालीपन अवश्य आ जायेगा। अचला नागर जी ने भी इस सत्य को स्वीकार करते हुए लिखा है- "मेरे बाबूजी न होते अगर मेरी बा न होती..., तभी तो वे मुक्त कंठ से कहते थे कि तीन चौथाई अमृतलाल नागर प्रतिभा है। मई सन् 1985में बा के जाने के बाद साथ छूटा तो बाबूजी चौथाई ही रह गये।"[9] अपने प्रेय के प्रति जो इतने असरदार और सतर्क रह पाये हैं, उसका श्रेय नागर जी अपनी बिट्टो (प्रतिभा) को ही देते हैं। यह उनके वैवाहिक जीवन की चरम उपलब्धि मानी जायेगी। उपर्युक्त उद्धरणों से यही बात स्पष्ट होती है कि नागर जी नारी के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण रखनेवाले परिवारप्रिय लेखक थे । आगे हम यह देखने का प्रयास करेंगे कि उनकी औपन्यासिक सृष्टि में नारी के प्रति उनका कैसा रवैया रहा है !

औपन्यासिक नारी पात्रों के प्रति नागर जी की नारीवादी जीवनदृष्टि :

'महाकाल' (भूख) में पाँचू चिंतन अत्यधिक मात्रा में आलेखित है, पर नारी विषयक नागर जी का दृष्टिकोण स्वयं स्पष्ट है। शिबू भूख से त्रस्त अपने आपको सँभाल नहीं पा रहा है, वह परिवार के सामने उसकी पत्नी पर बलात्कार करता है। इतना ही नहीं वह उसकी पत्नी को नूरुद्दीन को बेच देना चाहता है। उसका तर्क है- 'हरामजादी तू मेरी वस्तु है। उसके पास सीधा तर्क था कि पत्नी पति की मिल्कियत है और इसीलिए कुदरतन उसे सर्वाधिकार प्राप्त है। मैं इसे बेचूँगा। मुझे भूख लगी है... भूख !' यहाँ घृणित समाज का प्रतिनिधित्व करने वाला शिबू सामन्ती विचारों का ही उदाहरण है। यहाँ नारी की पराधीनता तो है ही, पर उसी शिबू

की पत्नी उसे शक्तिशाली तमाचा मारती है। यह तमाचा प्रतिकात्मक रीति से समाज के मुँह पर भी है, परन्तु यह कार्य 'अग्निगर्भा' की सीता नहीं कर सकती। पढ़ी-लिखी होने की मर्यादा जो उसके सामने है ! शायद सीता एक आदर्श भारतीय नारी का चोला पहनकर बैठी है। वह समझती है 'पति तो परमेश्वर है वह उचित अनुचित कुछ भी कर सकता' है। जिसका विरोध वह सिर्फ पति से अलग किराये के मकान में रहकर करती है। यहाँ सीता की आत्मनिर्भरता दृष्टिगत होती है, पर यहाँ बात उतनी ही सच है कि वह खुलकर समाज का या पति का विरोध नहीं कर सकती। यहाँ 'अग्निगर्भा' नारी जीवन की त्रासदी का सिलसिलेवार-ब्यौरा देता है। नागर जी ने इस उपन्यास में दहेज समस्या के साथ-साथ नारी की आकांक्षा को भी अभिव्यक्ति दी है। नारी के साथ होने वाले अत्याचारों को शीला और सर्वेश्वरी के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। शीला व सर्वेश्वरी अपने पति के हाथों हररोज मार खाती है।

'बूँद और समुद्र' में महिपाल के जरिए नारी विमर्श इस रूप में अंकित है- "मौजूदा समाज में नारी की एक अजीब सामाजिक स्थिति है खासतौर से हमारे देश में तो यह विचित्रता और भी स्पष्ट होकर झलकती है। हम देखते हैं कि औरत इस समय आम घरों में किसी-न-किसी रूप में बेइज्जती का जीवन बिताती है। छोटे आदमी कहलाने वालों को कौन कहे, बड़े-बड़े सभ्य, रईसों और पंडितों के घरों में भी स्त्री जाति का दमन होता है। तरह-तरह से उनका अपमान होता है। आम जहनियत में स्त्री घर का काम-काज, सबकी सेवा-टहल करने वाली और पुरुष के भोग की वस्तु होने के अलावा और कुछ भी नहीं। हाँ, उसका एक महत्त्व यह अवश्य है कि यह बच्चे पैदा करने वाली मशीन भी है। बच्चे चूंकि इन्सानी जिन्दगी को बढ़ाने के लिये अहम जरूरी है इसलिये उनका उत्पादन करने वाली फैक्टरी का भी महत्त्व है।...पर इतनी बेइज्जती अमानुषिक व्यवहार होने पर भी नारी से बढ़कर पुरुष के लिये और कोई भी अधिक आदरणीय नहीं है। दुनिया अब भी समझती है कि नारी समाज की इज्जत है पुरुष जगत् निश्चित रूप से यह जानता है कि नारी के बगैर वह अधूरा है।"[10] यह चिंतन नागर जी की स्पष्ट विचारधारा को प्रस्तुत करता है।

ताई, बड़ी, वनकन्या की भाभी, पाली, चित्रा, सज्जन की माँ तथा महिलाश्रम की नारियों की व्यथा-कथा ने पुरुषों के अत्याचारों से स्पष्ट हुआ है कि भारतीय समाज की नारी 'सर्वहारा' है। प्रो.गोपाल राय ने तो केन्द्रीय कथ्य के लिए बेबाक कहा है- "मेरी दृष्टि में इस उपन्यास का केन्द्रीय कथ्य भारतीय नारी के जीवन के त्रासदी और ममता का अंकन है जो केन्द्रीय पात्र ताई के चरित्र के रूप में प्रस्तुत हुआ है। उपन्यास के अन्य स्त्री पात्र भी वनकन्या, शीला स्विंग, चित्रा राजदान, बड़ी, नन्दो, कल्याणी, लाले की घरवाली, वनकन्या की भाभी, महिलाश्रम की नारियाँ आदि सामन्ती मूल्यों से जकड़ी नारी की विवशता, घुटन, कुंठा, उत्पीड़न और इनसे मुक्ति के लिए संघर्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं।"[11] 'शतरंज के मोहरे' में फलित होता है कि सामान्य प्रजा में सर्वाधिक पीड़ित है नारी, और आज के नारी-प्रधान युग में नारी के पीड़न शोषण का अनावरण खंडन यथार्थवादी जनवादी दृष्टि का प्रमुख अंग है। कुलसुम, भुलनी, कुदसिया बेगम तथा अन्य अनेक दासियों की जीवन-यात्रा में यह दृष्टि प्रतिफलित हुई है। वस्तुतः इस उपन्यास की मार्मिकता में कुलसुम, भुलनी तथा कुदसिया बेगम जैसी नारियों के करुण अन्त ने विशेष योग दिया है। मार्मिकता उत्पन्न करने के लिए जैसी मानवता, आस्था, दृढ़ता आदि गुणों का शील वैशिष्ट्य अपेक्षित होता है वह इन तीनों नारियों में है। 'सुहाग के नूपुर' में नागर जी ने नारी के मुख्यतः दो रूपों का विशदता से आलेखन किया है। तत्कालीन समय में नारी दो वर्गों में बँटी हुई थी; कुलवधू और नगरवधू ! जहाँ तक कुलवधू का प्रश्न है उसके अधिकार असीम थे उसकी प्रतिष्ठा, उसका आदर विपुल था। घर की समस्त सम्पत्ति की अधिकारिणी केवल वह थी। यत्नपूर्वक कमाकर धन लाने के बाद पुरुष उसे कुलवधू को सौंप देता था और फिर उसे स्पर्श भी नहीं कर सकता था। घर के साम्राज्य की एकछत्र स्वामिनी थी नारी! अधिकार के साथ ही उसके कर्तव्य भी थे घर के सभी प्राणियों की देख-रेख, सुख सुविधाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति।

उपन्यासकार ने यहाँ निश्चय ही नगरवधू की तुलना में कुलवधू की प्रतिष्ठा को प्रस्थापित किया है। किन्तु नगरवधू का असम्मान नहीं किया। यह ठीक है कि दोनों के सम्मान में भेद है। चेलम्मा यौवन काल में कला सेविका तथा यौवनेतर काल में जन-सेविका है। दोनों ही स्थितियों में उसने आदर पाया है।

'सेठ बाँकेमल' में सेठ जी भी अपने अनुभव जगत का पिटारा खोलकर बताते हैं-"पर अब तो जमानाई बदल गया सुसरा। आजकल की पढ़ी-लिखी लौंडियाँ हमारी धौस थोड़ी मानै हैं। तो बात जे है, भैयो, कि वो साला बाईस्कोप चला है, सनीमा, विसमें साले में रोज येई बात बताई जावे है। किसी भी साले ऐरे-गैरे खुसकैट के साथ आँख लड़ा ली, और जो माँ-बाप भला चाने वाले मना करे हैं तो विनों की छाती पै सवार हो जावै हैं सुसरी।"[12] यहाँ नागर जी हँसी-मजाक वाली शैली में जीवन की बहुत बड़ी सच्चाई प्रस्तुत करते हैं, जो उनकी अनुभवी जीवनदृष्टि ने बहुत पहले देख लिया था। 'अमृत और विष' में नागर जी ने गैहाबानों के रूप में ऐसी आधुनिक नारी के विचारों का चित्र सामने लाते हैं, जो विवाह के बन्धन को आवश्यक नहीं मानती और मुक्ति में विश्वास रखकर अपने जीवन का नक्शा खुद बनाना चाहती है। स्वछन्द भोग उसके लिए नारी स्वातंत्र्य का मूल आधार है। इस उपन्यास में और एक बात देखने योग्य है स्त्रियों का संघर्ष। पूँजीवादी समाज में सब से ज्यादा शोषण की यन्त्रणा उन्हीं को सहनी पड़ती है। सिंधी लड़कियों के साथ सहदेई जिस घर में रहती है वह साक्षात् नरक है। लेकिन पुत्तीगुरु की पत्नी पति की विरुद्ध पुत्र का पक्ष लेती है। कुँवर रद्धूसिंह के विरुद्ध सुमित्रो चूल्हे की जलती लकड़ी हाथ में लेकर खड़ी हो जाती है। रमेश रानी बाला को मंत्र देता है- 'और तुम लड़कियों का मोर्चा संगठित क्यों नहीं करती हो, घर-घर में आग लगाओ जाय के।' इस तरह से स्त्रियों को एक पुरुष की ओर से साथ देने की बात अपने आप में नवीन है। 'सात घूँघटवाला मुखड़ा' में मुन्नी उर्फ दिलाराम भले ही हुकूमत करने के लिए पैदा हुई हो, उस पर हुकूमत नहीं की जा सकती हो', लेकिन वही मुन्नी दश हज़ार अशर्फियों में बेची जाती है। यह सामंती व्यवस्था का नमूना है। आखिर वही मुन्नी सब को अपनी ऊँगलियों पर नचाती है अपने देह के सौदे के बदले में। यह उसके चरित्र का दूसरा पहलू है। बशीर खाँ दिलाराम से कहता है- "अरे यही कि मर्द के दो-चार निकाही बीवियां होती है और सौ-पचास दिल बहलाने वाली खूबसूरत गुडियां भी वह हरम में रखता है। मगर हुजूर ने तो अभी एक गुड्डा और एक शौहर ही अपने हरम में आबाद किया है। गुड्डा भाग गया, शौहर मर गया और हुजूर बेगम साहिबा फिर भी अपने वास्ते सिर्फ एक ही शौहर चुन रही हैं, और वह भी ऐसा जो कि खिलौना भी हो और शौहर भी।"[13] यहाँ पुरुष-स्त्री के जातिगत रवैये को स्पष्ट किया गया है। तवारीख़ी क़िस्से बयान करते हैं कि उस वक्त यह खुलेआम होता था, आज लुकाछिपी से होता है। 'एकदा नैमिषारण्ये' के प्रारंभिक पृष्ठ में तुलसी मैया की पुजारिन और सोलह वृन्दाएँ स्वछन्दतापूर्ण जीवन में विश्वास करती है।

'मानस का हंस' के नारी पात्रों में मोहिनी और रत्नावली दोनों के चरित्र अपने-अपने वातावरण की भाव-भंगिमा लिए हुए हैं। मोहिनी वेश्या जीवन छोड़कर सामाजिक जीवन अपनाना चाहती है। रत्नावली-तुलसी का गार्हस्थिक जीवन सफल है। रत्नावली ने अपने चरित्र से बताया है कि नारी सिद्धि मार्ग में बाधक नहीं प्रेरक व साधक बन सकती है। उसका वियोगी जीवन करुण और मार्मिक है। गंगेश्वर कहता है 'नारी बिना किसी की गति नहीं, न हमारे जैसे फक्कड़ो की, न तुम्हारे जैसे परमपवित्र शास्त्रियों की।' तो तुलसी विश्वामित्र का संदर्भ देते हैं' जाया ही घर होती है।' ऐसे तो अनेकानेक वाक्यों से नारी की महिमा की गई है। 'नाच्यौ बहुत गोपाल' में पुरुष के द्वारा नारी का शोषण तो हुआ ही है, पर साथ ही साथ नारी के द्वारा भी नारी का शोषण हुआ है। मेहतर सर्वाधिक शोषित जाति और उस पर भी मेहतर जाति की नारी उपन्यास की नायिका ब्राह्मणी निर्गुण की यही वास्तविकता है। किशोरी के रूप में उसकी काया का सेठानी तथा उसकी कोठी से बबुआ, खड़गबहादुर, मास्टर वसंतलाल आदि शारीरिक शोषण करते रहे। पति मसुरियादीन ने कायिक कष्ट दिए। पति मोहना ने भी निर्गुनियाँ को विभिन्न प्रकार से दुःख दिया। ममिया सास लातों-घूंसों से मारपीट कर उससे अपना गन्द उठवाने

से लेकर सूअर का मांस पकाने जैसा निषिद्ध, अकल्पनीय कार्य कराती रही। एक ब्राह्मणी ने अपने पुराने संस्कारों को भुलाकर यह कष्ट कैसे सहे होंगे ? कामवासना ने उसे क्या से क्या बना दिया! पर यही उसके जीवन की वास्तविकता है।

'खंजन नयन' में नारी के चरित्रांकन की ओर भी विशेष ध्यान दिया गया है। अपने आत्मसंघर्ष प्रक्रिया में सूर समूचे मध्यकालीन सोच का ही प्रतिनिधित्व करते हुए, कन्तो को नरक का द्वार कहकर उसका तिरस्कार करने की कोशिश भी करते हैं, लेकिन फिर गहरे संघर्ष और आत्ममंथन के दौरान वह अपनी इस धारणा पर पुनर्विचार करने में भी संकोच नहीं करते हैं। 'परंतु राधारानी भी तो नारी हैं, सीता पार्वती भी नारी है। राधेश्याम, सीताराम, गौरीशंकर नारी से मुक्त कौन है ? सच पूछो तो विरोध नारी से नहीं वरन् उसके कामवासना का माध्यम होने से है।' ऐसा भी नहीं कि एक बार निर्णय ले लेने के रास्ते में कोई बाधा ही न आई हो। कायिक संघर्ष और अन्तर्मन्धन की इस स्थिति से सूर को बार-बार गुज़रना पड़ा है। यह भी उतना ही सच है कि जो कन्तो 'आँवे की आग' की तरह अपने 'मदनगंधा' रूप में उसके पास आती है वही यदि सूर को सहयोग नहीं देती तो सूर के लिए यह संघर्ष और भी दुष्कर हो गया होता। यहाँ नारी सिद्धिमार्ग की बाधा नहीं, परन्तु सहयोगी है, ऐसा चरितार्थ किया गया है। सूरकालीन मध्यवर्गीय मानसिकता नारी के माध्यम से प्रकट होती है। उस युग में नारी के अनेक रूप थे गृहिणी, विधवा, वेश्या, दासी, दुराचारिणी आदि। उस काल की विधवाएँ कामाचार में लिप्त थीं। उग्र कामवासना तथा अर्थलिप्सा की पूर्ति के लिए वे दुराचार में प्रवृत्त थीं। मथुरा में भोले गुरु एक ऐसी ही कामविकृति से ग्रस्त विधवा के चक्कर में फँस जाता है। गोवर्धन में साठ वर्षीय गंगाबाई मन्दिर के अधिकारी कृष्णदास को अपने शारीरिक सौंदर्य एवं मधुर वाणी से लुभा लेती है। उसके प्रति मोहित होकर कृष्णदास बदनाम हो जाते हैं।

'बिखरे तिनके' में सरसुतिया को सुहागी से भरपूर प्रेम मिलता है, वहाँ स्वतंत्रकुमार उस पर बलात्कार कर उसकी हत्या कर देता है। सुनन्दा एक बदचलन स्त्री है, पर वैसी बनाने में पुरुष समाज का ही हाथ है। 'करवट' में स्त्री पात्रों के अंकन में नागर जी पूर्णतया सफल हुए हैं। इस उपन्यास में चम्पकलता, कौशल्या और नैन्सी प्रमुख रूप से उभरे हैं। चम्पकलता और कौशल्या दोनों को आरंभ में कष्ट भोगना पड़ा है। चम्पक पर उसके ससुर ने सौत लाकर बैठा देने का प्रबन्ध कर दिया था और कौशल्या को पति ने ही गुण्डों के हाथों उठवा दिया था। पर वे दोनों ही अपने-अपने दुर्भाग्यों से बचकर बंसीधर तथा देशदीपक के घर में आ गई और फिर सुखी दाम्पत्य जीवन बिताने लगी। नागर जी ने इन दोनों स्त्री पात्रों को ऐसी आदर्श हिन्दू नारियों के रूप में रचा है, जो स्वाधीन चिंतन भी करते हैं तथा अपने पतियों की सच्ची सहधर्मिणी भी बन सकी हैं। नैन्सी का चरित्र स्वार्थी एवं कामासक्त है। 'पीढ़ियाँ' में शारदा देवी, मनोरमा खन्ना, मनोरमा टंडन, शकुन्तला तथा शबाना के नारी के विभिन्न रूपों को उजागर किया गया है। इन पात्रों में से मनोरमा खन्ना ही विवाहेतर सम्बन्ध में लिप्त है। बाकी उपर्युक्त पात्र पारिवारिक सूत्र में प्रेमपूर्ण रीति से बँधे हैं। शकुन्तला और शबाना हिन्दू-मुलसमान समाज की आधुनिक नारी के उदाहरण है।

अमृतलाल नागर और उनकी नारी दृष्टि पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है। परंतु हमने बहुत ही संक्षेप में नागर जी के नारीवादी दृष्टिकोण को स्पष्ट किया गया है। उन्होंने नारी के प्रति हमेशा स्वस्थ दृष्टि रखी है। नारी चरित्र के अनेक रूपों का आकलन उनकी स्त्री समाज की गहरी अध्ययनशीलता का परिणाम है। नागर जी की औपन्यासिक सृष्टि में अनेकरूपा नारियों के दर्शन होंगे, जो नारी व्यक्ति-समाज को बना-सजा-सँवार सकती है; वही परिस्थितिवश मोहमाया का निषिद्ध रूप भी धारण कर सकती है । नारी के वांछनीय-अवांछनीय रूपों का आलेखन कर नागर जी ने यहाँ समाज की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत की है, उसमें दोराय नहीं है । 'अमृत और विष' की नारी पात्र 'माया' में हमें नागर सहधर्मिणी 'प्रतिभा जी' के दर्शन हों, उसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। नागर जी की नारी सृष्टि बेहिसाब व बेमिसाल है।

संदर्भ संकेत -

1. नागर, शरद : अमृतलाल नागर रचनावली खण्ड-1, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-1997, (भूमिका से), पृ.42
2. झाडे, डॉ.सुरेखा : अमृतलाल नागर के जीवनी परक उपन्यास से उद्धृत, अमन प्रकाशन, कानपुर, प्रकाशन वर्ष-1996, पृ.16
3. नागर, कुमुद : वटवृक्ष की छाया में, विश्व विद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रकाशन वर्ष-2004, पृ.100-101
4. नागर, शरद : अमृतलाल नागर रचनावली खण्ड-10, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-1997, (प्रारंभिक पृष्ठ)
5. मधुरेश : अमृतलाल नागर व्यक्तित्व और रचना संसार से उद्धृत, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-2000, पृ.20
6. नागर, कुमुद : वटवृक्ष की छाया में, विश्व विद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रकाशन वर्ष-2004, पृ.101
7. नागर, शरद : अमृतलाल नागर रचनावली खण्ड-10, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-1997, (टुकड़े टुकड़े दास्तान), पृ.46
8. नागर, कुमुद : वटवृक्ष की छाया में, विश्व विद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रकाशन वर्ष-2004, पृ.106
9. पालीवाल, डॉ.शोभा : अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना से उद्धृत, साहित्यागार जयपुर, प्रकाशन वर्ष-1995, पृ. 3
10. नागर, शरद : अमृतलाल नागर रचनावली खण्ड-2, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-1997, ('बूँद और समुद्र'), पृ.105
11. प्रो. गोपाल राय: हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-2005, पृ. 221-222
12. नागर, शरद : अमृतलाल नागर रचनावली खण्ड-8, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-1997, ('सेठ बाँकेमल'), पृ.52
13. नागर, शरद : अमृतलाल नागर रचनावली खण्ड-4, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-1997, ('सात घूँघटवाला मुखड़ा'), पृ.503